बी० ए० पार्ट–3 हिन्दी साहित्य (प्रतिष्ठा)

डॉ० आशा कुमारी

अंशकालीन व्याख्याता

हिन्दी विभाग

मगध महिला कॉलेज, पटना

मोबाइल नम्बर–9304098602,7004661162

Email _ ashakumari2500@Gmail.com

गबन की भाषा

उपन्यास–सम्राट प्रेमचंद हिंदी कथा–साहित्य के अमर कलाकार है। उन्होंने अपने भावों की अभिव्यक्ति अधिकतर लघु कथाओं तथा उपन्यासों के माध्यम से की है। उनकी सभी कहानियाँ और उपन्यास आज भी अपनी अक्षुण्ण सत्ता बनाये हुए है। अतः इतना तो स्पष्ट है कि प्रेमचंद की भाषा–शैली में ये सभी विशेषताएँ अनायास उपलब्ध हो जाती है। हम 'गबन' के आधार पर मूल्याकंन करेंगे–

(1) **सरलता एवं सुस्पष्टता**– भाषा के संबंध में प्रेमचंद के विशिष्ट विचार थे। उनके अनुसार साहित्य में ऐसी भाषा का प्रयोग होना चाहिए सर्वगंय हो। जो भाषा कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रहे वह कभी सफल नहीं माना जा सकती। उसे सर्वसुलभ बनाने के लिए हमें उसे व्यापक रूप देना होगा। वह किसी एक प्रांत की, किसी एक वर्ग की ही भाषा नहीं होनी चाहिए इसीलिए उन्होंने भाषा के समवित रूप को महत्व दिया। उनकी भाषा में सभी प्रकार की बोलियों और सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग उपलब्ध हो जायेगा। यही कारण है कि प्रेमचंद के साहित्य को जितनी अधिक संख्या में पढ़ा जाता है, उसकी संख्या में किसी और साहित्य को नहीं।

भाषा की यह सुगमता आवश्यक भी है। भावाभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम होने के कारण ही भाषा का साहित्य में महत्व है। हम इसके द्वारा अपने भावों को पाठक तक सहज रूप से पहुँचा सकते है। यदि भाषा क्लिष्ट होगी तो यह प्रयोजन कभी सिद्ध नहीं हो सकता इसलिए भाषा जनता के जितनी अधिक निकट होगी उतनी ही सफलता से वह साहित्यकार के भावों को व्यक्त कर सकेगी। 'गबन' की भाषा पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेमचंद ने भाषा के प्रति अपने दृष्टिकोण का यहाँ सर्वथा पालन किया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है– बातें बना रहे हो। अगर तुम्हें मुझसे सच्चा प्रेम होता तो तुम कोई पर्दा न रखते। तुम्हारे मन में जरूर कोई ऐसी जरूरी बात है जो तुम मुझसे छिपा रहे हो। कई दिनों से देख रही हूँ, तुम चिंता में डूब रहते हो। मुझसे क्यों नहीं

कहते। जहाँ विश्वास नहीं है, वहाँ प्रेम कैसे रह सकता है?(गबन, पृष्ठ90) जालपा के इस कथन में छोटे–छोटे वाक्यों का प्रयोग कराया गया है, जिससे प्रवाह बना रहता है।

(2) **सजीवता**– भाषा को सजीव बनाए रखने के लिए प्रेमचंद ने उसमें प्रवाह की रक्षा की है। उनकी भाषा कहीं भी भाराक्रांत नहीं हो पायी। आद्योपांत काव्यत्व के सौंदर्य से वह अनुप्राणित रही है। किसी बात को स्पष्ट करने के लिये अथवा प्रकृति का मनोरम वर्णन करते समय उन्होंने काव्य की भाँति विभिन्न उपमानों का प्रयोग किया है। 'गबन' में वकील साहब की मृत्यु के समय प्रकृति भी मानो उदास हो गई है। इस अवसर पर उपन्यासकार ने कितनी काव्यमयी शब्दावली में चित्र प्रस्तत किया है– ''सामने उद्यान में चांदनी कुहरे की चादर ओढ़े, जमीन पर पड़ी सिसक रही थी। फूल और पौधे मालिन मुख, सिर झुकाए, निराशा और भय से विकल हो–होकर मानो उसके वक्ष पर हाथ रखते थे, उनकी शीतल देह का स्पर्श करते थे और आँसू की दो बूँदें गिराकर फिर उसी भाँति देखने लगते थे।''(गबन, पृष्ठ–190) यहाँ यह उल्लेख है कि विचार–प्रधान स्थलों पर उनकी भाषा में यह प्रवाह लुप्त हो गया है। रंगभूमि जैसे उपन्यासों के वह स्थल इसी प्रकार के है, जहाँ दार्शनिक विचारों को प्रमुखता दे दी गई है, किंतु 'गबन' में चिंतन–प्रधान अथवा दर्शन की शुष्कता वाले स्थल प्रायः नहीं है। अतः इसकी भाषा में अपेक्षाकृत अधिक तारल्य है।

(3) **मुहावरे–लोकोक्तियों एवं सूक्तियों का प्राचुर्य**– दैनिक व्यवहार में मुहावरों का प्रयोग प्रायः मध्यवर्ग अथवा ग्रामीण समाज द्वारा अधिक किया जाता है। 'गबन' का कथानक मध्यवर्ग से ही संबंध रखता है। इसी कारण जालपा, रमानाथ, देवीदीन, रामेश्वरी आदि के वार्तालाप में मुहावरों का पुट स्वयं आ गया है। खून मुँह लगना, जले पर नमक छिड़कना, सिर मुड़ाते ही ओले पड़ना, आँखें भर आना, रंग उड़ जाना, नाक में दम करना, आस्तीन का साँप बनना, आटे दाल का भाव मालूम होना, लट्टू हो जाना, दाँत पीसना, भीगी बिल्ली बनना, एड़ी चोटी का जोर लगाना जैसे प्रचलित मुहावरे इस उपन्यास की भाषा को प्रवाहमयी एवं प्रभावात्मक बनाने में सहायक रहे हैं।

(4) **अभिधा का प्राचुर्य एवं व्यंग्यात्मकता**– भाषा में यों तो अभिधा, लक्षणा एवं व्यंजना तीनों शब्दशक्तियों का आश्रय लिया जाता है, किंतु प्रेमचंद ने इनमें से अभिधा को विशेष महत्व दिया है। उन्होंने अपने उपन्यासों की रचना जन–सामान्य के लिये की थी। 'गबन' के प्रारम्भ में ही यह वर्णनात्मकता और अभिधेय भाषा देखी जा सकती है–''बरसात के दिन हैं, सावन का महीना। आकाश में सुनहरी घटाएँ छाई हुई है। रह–रहकर रिमझिम वर्षा होने लगती है। अभी तीसरा पहर है, लेकिन ऐसा मालूम हो रहा है कि शाम हो गई। आमों के बागों में झूला पड़ा हुआ है। लड़कियाँ झूल रही हैं और उनकी माताएँ भी। दो चार झूल रही हैं। कोई कजली गाने लगती हैं, कोई बारहमासा'' (गबन,पृष्ठ–1)

(5) **आलंकारिता**–भाषा को सुगम, स्पष्ट और प्रभावपूर्ण बनाने के लिए अंलकारों का प्रयोग किया जाता है। 'गबन' की भाषा में भी उपमा, उत्प्रेक्षा, उदाहरण आदि अलंकारों के माध्यम

से भावों में उत्कर्ष का विधान किया गया है। उदाहरण के लिये–रमा ने पिंजड़े में बंद पक्षी की भाँति उन दोनों को कमरे से निकलते देखा।(पृ०–76) (उपमा अलंकार)

दयानाथ ने इस तरह गर्दन उठाई मानो सिर पर सैकड़ों मन का बोझ लदा हुआ है। (पृ०–14) (उत्प्रेक्षा अलंकार)

(6)**उर्दू शब्द** – 'गबन' की भाषा की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता है उर्दू शब्दावली का अधिक प्रयोग। वस्तुतः प्रेमचंद की साहित्यिक जीवन उर्दू के उपन्यास–कहानी लिखने से प्रारंभ हुआ था और कुछ समय बाद उन्होंने हिंदी के माध्यम से अभिव्यक्ति की। इसी कारण वह अपनी परवर्ती हिंदी कृतियों में भी उर्दू की शब्दावली से नहीं बच सके। उनके उपन्यासों तथा कहानियों में यह उर्दू शब्दावली स्तर की दृष्टि से दो रूपों में व्यवह्रत हुई है– अधिकांश उर्दू–शब्द हिंदी पाठक के लिए बोधगम्य हैं, किंतु कुछ कसे शब्द भी है जो निश्चय ही दुरूह कहे जायेंगे। उदाहरण के लिये– इल्ज़ाम, नसीब, मँसूबे, जहनुम, अख्तियार, मुरव्बत, जैसे शब्द हिंदी भाषा में घुल–मिल गए है और बोलचाल में प्रायः उनका किया जाता है।

(7) **अंग्रेजी–शब्द** –स्वाभाविकता की रक्षा के लिए प्रेमचंद अंगेजी के टेनिस–रैकेट, शर्ट, स्टांप जैसे कतिपय प्रचलित शब्दों को भी ग्रहण किया है जो आरोपित नहीं है, बल्कि हिंदी के अंग बनकर प्रयुक्त हुए है।

(8) **स्थानीय शब्द**– 'गबन' में स्थानीय अथवा ग्रामीण शब्दों को भी ग्रहण किया गया है इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करते समय भी उपन्यासकार की प्रवृत्ति संभवतः यही रही है कि भाषा को पात्रों की बोलचाल के अनुरूप रखा जाए। जाकड़, टीका, बंकुची, आदि कुछ इस प्रकार के शब्द है जो शहरी पाठक के लिए कुछ अपरिचित होने पर भी वातावरण की प्रस्तुति में अत्यंत सफल रहे हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि 'गबन' की भाषा में प्रेमचंद ने भाषागत सभी विशेषताओं का समावेश किया है। वह पूर्णतः सशक्त, प्रवाहमयी एवं स्वाभाविक रही है। भाषा के लिए यह आवश्यक है कि वह लेखक के विचारों का सफल प्रतिनिधित्व कर सके। इस दृष्टि से प्रेमचंद की भाषा में किसी प्रकार की कमी नहीं रही। उन्होंने हिंदी के तत्सम व तद्भव शब्दों के साथ–साथ उर्दू व अंग्रेजी के जिस शब्द में भी अपने भावों की सफल अभिव्यक्ति देखी, उसी को ले लिया। सरल एवं सुस्पष्ट शब्दों की योजना, मुहावरे, लोकोक्तियों का अभूतपूर्व सौंदर्य, चित्रोमयता, पात्रानुकूलता, आलंकारिता आदि उनकी भाषा के ऐसे सहज गुण हैं। जिन पर पाठक का ह्रदय मुग्ध हुए बिना नहीं रहता। वास्तव में अपनी समर्थ एवं स्वाभाविक भाषा–शैली के कारण प्रेमचंद जन–सामान्य में युग–युग तक बहुचर्चित रहेंगे। किसी आलोचक ने ठीक ही कहा है–प्रेमचंद की भाषा उनकी अपनी है, जिसे उन्होंने सप्रयास प्राप्त किया है और जिसके संबंध में वह प्रारंभ से ही कुछ धारणाएँ लेकर चले है। प्रेमचंद हिंदी को राष्ट्रभाषा मानते थे, इसलिए उनका प्रयत्न था कि हिंदी किसी सीमित

दायरे में न सिमट जाए। वह हिंदी के संबंध में अत्यंत उदारता के पक्षपाती थे और चाहते थे कि जिस प्रकार भारतीय संस्कृति समन्वयात्मक रही है, वैसे ही हिंदी भी देश की विभिन्न भाषाओं के बीच विचार–विनिमय का सामान्य साधन बन सके। उनकी अपनी भाषा ऐसी ही थी, जो देश के बड़े भू–भाग की जनता आसानी से समझ सकती थी। वस्तुतः सरल, सजीव, मुहावरेदार गद्य शैली के जनक प्रेमचंद का स्थान हिंदी साहित्य में लोकप्रिय उपन्यासकार के रूप में सर्वोच्चय है। एक–एक शब्द का जितना सार्थक प्रयोग उन्होंने अपने साहित्य में किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।